**ओ३म्**

**‘परम दयालु, कृपालु और हमारा हितैषी परमेश्वर’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

यदि हम यह विचार करें कि संसार में हमारे प्रति सर्वाधिक प्रेम, दया, सहानुभूति कौन रखता है, कौन हमारे प्रति सर्वाधिक सम्वेदनशील, हमारे सुख में सुखी व दुःखी में दुखी, हमारे प्रति दया, कृपा व हित की कामना करने वाला है, तो हम इसके उत्तर में अपने माता-पिता, आचार्य और परमेश्वर को सम्मिलित कर सकते हैं। इसमें कहीं कोई अपवाद भी हो सकता है। हम जब इस प्रश्न पर विचार करते हैं तो हमें मनुष्य वा मनुष्य शरीर में निवास कर रही जीवात्मा का सर्वाधिक हितैषी जो इसे प्रेम करने के साथ इस पर मित्र भाव रखकर असीम दया व कृपा करता है, वह सत्ता एकमात्र परमेश्वर ही है। अतः हमें उसके प्रति उसी के अनुरूप भावना के अनुसार प्रेम, मित्रता व कृतज्ञता का व्यवहार करना चाहिये। यदि ऐसा नहीं करेंगे, संसार में अधिकांश अज्ञान व अन्य कारणों से ऐसा ही करते हैं, तो हम कृतघ्न होंगे जिस कारण हमें जन्म-जन्मान्तरों में अपने इस मुर्खतापूर्ण आचरण व व्यवहार की भारी कीमत चुकानी पड़ेगी। अतः हमें अपने इस जीवन में प्रतिदिन समय निकाल कर इस प्रश्न पर अवश्य विचार करने के साथ इसका समाधान खोजना चाहिये।

पहला प्रश्न है कि ईश्वर हमारा परम हितैषी किस प्रकार से है? इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिए हमें ईश्वर व आत्मा के स्वरुप को जानना होगा। ईश्वर का स्वरूप हम आर्यसमाज के पहले व दूसरे नियम को पढ़ व समझकर जान सकते हैं। पहला नियम है कि **‘सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।’** दूसरा नियम है कि **‘ईश्वर सच्चिदानन्द-स्वरुप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकत्र्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।’** पहले नियम में समस्त विद्या व समस्त सांसारिक पदार्थों, सूर्य, चन्द्र, पृथिवी व पृथिवीस्थ सभी पदार्थों, का आदि मूल परमेश्वर को कहा गया है। जहां तक विद्या का प्रश्न है, यह परमेश्वर में सदा सर्वदा अर्थात् अनादिकाल से विद्यमान है। इस विद्या का मनुष्यों के लिए जो उपयोगी भाग है उसे ईश्वर बीज रुप में चार वेदों के माध्यम से सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों द्वारा प्रदान करता है। वेदों के मन्त्रों में जो शब्द, अर्थ और सम्बन्ध हैं, उनका अर्थ व उदाहरणों सहित ज्ञान भी परमेश्वर उन ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को कराता है। अतः मनुष्यों को प्राप्त होने वाली समस्त विद्याओं का आदि मूल परमात्मा ही निश्चित होता है जिसका आधार वेद है। मनुष्य समय समय पर अपने ऊहापोह व चिन्तन मनन आदि कार्यों से उसका विस्तार कर उससे लाभ लेने के लिए नाना प्रकार के सुख-सुविधाओं के साधन आदि बनाते रहते हैं। हमें लगता है कि मनुष्य तो केवल अध्ययन, चिन्तन-मनन व पुरुषार्थ करते हैं परन्तु उनके मस्तिष्क में जो नये विचार व प्रेरणायें होती हैं वह ईश्वर के द्वारा उनके पुरुषार्थ आदि के कारण होती हैं। इसी प्रकार से ज्ञान-विज्ञान का विस्तार होकर आज की स्थिति आई है। आर्यसमाज के दूसरे नियम में ईश्वर के इतर स्वरूप पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। यह सब बातें वेदों के आधार पर निश्चित की हुईं हैं। वेदों में इनका यत्र-तत्र वर्णन पाया जाता है। इसमें हम यह भी जोड़ सकते हैं कि जीवात्मा को उसके जन्म-जन्मान्तरों के अवशिष्ट कर्मों का सुख-दुःख रूपी फल प्रदान करने के लिए ही ईश्वर इस सृष्टि को बनाकर उसमें मनुष्यों व अन्य प्राणियों को उत्पन्न करता है। मनुष्य व इतर प्राणी योनियां भी जीवात्मा के पूर्व जन्म के कर्मों के आधार पर ही उन्हें परमेश्वर से प्राप्त होती हैं। ईश्वर ने जीवात्माओं के लिए इस सृष्टि को बनाया, आदि सृष्टि में वेदों का ज्ञान देकर मनुष्यों को उनके कर्तव्य-अकर्तव्य वा धर्म-अधर्म से परिचित कराया और जीवात्मा को जन्म देकर उन्हें नाना व विविध प्रकार के सुखों से पूरित किया, इन व ऐसे अनेक उपकारी कार्य करने के लिए ईश्वर सभी जीवात्माओं व मनुष्यों का परम हितकारी व हितैशी सिद्ध होता है। **जीवात्मा का स्वरुप भी वेदों में तर्कपूर्ण शब्दों में बताया गया है जो कि अनादि, अविनाशी, अनुत्पन्न, अमर, नित्य, सूक्ष्म, अल्पज्ञ, एकदेशी, जन्म-मरण वा सुख-दुख रूपी कर्म-फल के बन्धनों में बन्धा हुआ है। असत्य व अधर्म का पूर्णतः त्याग कर जीवात्मा जन्म-मरण के बन्धनों से छूट कर मुक्ति को प्राप्त करता है।**

मनुष्य का शरीर संसार के सभी प्राणियों के शरीरों में सर्वोत्तम है। इसकी रचना अद्भुत है। मनुष्य वा अन्य प्राणियों के शरीरों की रचना का कार्य ईश्वर के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं कर सकता। आईये, इस मानव शरीर का वर्णन भी ऋषि दयानन्द के शब्दों में देखे लेते हैं। सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम् समुल्लास में ऋषि दयानन्द लिखते हैं कि **‘(प्रलय की अवधि समाप्त होने के बाद) जब सृष्टि का समय आता है तब परमात्मा (सत्व, रज व तम गुणों वाली कारण प्रकृति के) परमसूक्ष्म पदार्थों को इकट्ठा करता है। उस को प्रथम अवस्था में जो परमसूक्ष्म प्रकृतिरूप कारण से कुछ स्थूल होता है उस का नाम महत्तत्व और जो उस से कुछ स्थूल होता है उसका नाम अहंकार और अहंकार से भिन्न-भिन्न पांच सूक्ष्मभूतः श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, जिह्वा, घ्राण पांच ज्ञानेन्द्रियां, वाक्, हस्त, पाद, उपस्थ, और गुदा ये पांच कर्म-इन्द्रियां हैं और ग्यारहवां मन कुछ स्थूल उत्पन्न होता है। और उन पंचतन्मात्राओं से अनेक स्थूलावस्थाओं को प्राप्त होते हुए क्रम से पांच स्थूलभूत जिन को हम लोग प्रत्यक्ष देखते हैं उत्पन्न होते हैं। उन से नाना प्रकार की ओषधियां, वृक्ष आदि, उन से अन्न, अन्न से वीर्य और वीर्य से शरीर होता है। परन्तु आदि सृष्टि मैथुनी (स्त्री-पुरुष संसर्ग द्वारा) नहीं होती। क्योंकि जब स्त्री पुरुषों के शरीर परमात्मा बना कर उन में जीवों का संयोग कर देता है तदनन्तर मैथुनी सृष्टि चलती है।’**

इसी क्रम में ऋषि दयानन्द आगे लिखते हैं कि **‘देखो ! (ईश्वर ने) शरीर में किस प्रकार की ज्ञानपूर्वक सृष्टि रची है कि जिस को विद्वान् लोग देखकर आश्चर्य मानते हैं। भीतर हाड़ों का जोड़, नाड़ियों का बन्धन, मांस का लेपन, चमड़ी का ढक्कन, प्लीहा, यकृत्, फेफड़ा, पंखा कला का स्थापन, रुधिरशोधन, प्रचालन, विद्युत्, का स्थापन, जीव का संयोजन, शिरोरूप मूलरचन, लोम, नखादि का स्थापन, आंख की अतीव सूक्ष्म शिरा का तारवत् ग्रन्थन, इन्द्रियों के मार्गों का प्रकाशन, जीव के जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति अवस्था के भोगने के लिये स्थान विशेषों का निर्माण, सब धातु का विभागकरण, कला, कौशल, स्थापनादि अद्भुत सृष्टि को विना परमेश्वर के कौन कर सकता है?’**

इस प्रकार ईश्वर ने मनुष्य का शरीर बनाकर हम पर जो उपकार किया है, उसका हम किसी प्रकार से भी प्रतिकार वा ऋण, दया, कृपा आदि से उऋ़ण नहीं हो सकते। हम ईश्वर के इन सब उपकारों के लिए कृतज्ञ हैं और यही भाव जीवन भर बना रखें तभी हम मनुष्य कहलाने के अधिकारी हो सकते हैं। कृतघ्न मनुष्य को मनुष्य नहीं कहा व माना जा सकता। इतना ही नहीं, वेदों व वैदिक साहित्य का अध्ययन कर हम अपनी इस मनुष्य योनि में संसार के यथार्थ स्वरूप को जान सकते हैं व अर्जित ज्ञान से ईश्वरोपासना, अग्निहोत्र यज्ञ, पितृयज्ञ, अतिथि यज्ञ और बलिवैश्वदेव यज्ञ सहित परोपकार, सेवा, दान आदि कार्यों को करके जन्म-मरण के दुःखों से मुक्त हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त वैदिक जीवन का अवलम्बन कर हम मुक्ति को प्राप्त कर 31 नील 10 खरब 40 अरब वर्षों तक बिना जन्म व मृत्यु के ईश्वर के सान्निध्य को प्राप्त कर उसके आनन्द का भोग कर सकते हैं। ऋषि दयानन्द ने अपने जीवन के उदहारण से मनुष्यों को धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष की शिक्षा दी और इसके साथ सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थ लिख कर मोक्ष के सभी साधनों पर व्यापक रूप से प्रकाश डाला है। मोक्ष के साधनों को व्यवहार में लाना असम्भव नहीं तो कुछ असुविधाजनक तो है ही। इसी को धर्म व तप कहते हैं और यही हमारे भावी जन्म को सुधारने के साथ हमें मोक्ष की ओर अग्रसर करता है। मोक्ष में असीम सुख प्राप्त करना ही प्रत्येक जीवात्मा का लक्ष्य है। यह भी एक तथ्य है कि हम सभी जीवात्मायें अनेक बार मोक्ष में रहे हैं और इसके अतिरिक्त अनेक बार अधर्म के कार्य करके नाना व प्रायः सभी पाप योनियों में रहकर हमने अनेक दुःखों को भी भोगा है। हमें यह भी जानना है कि माता-पिता और आचार्य हमारे मित्रवत् हितकारी एवं कृपालु हैं परन्तु इन्हें प्रदान कराने वाला भी वही एक ईश्वर है। यह लोग भी हमारी ही तरह ईश्वर के कृतज्ञ हैं। अतः हम इन सभी के भी ऋणी हैं परन्तु ईश्वर का ऋण सबसे अधिक है। हमें इन सबके ऋणों से उऋण होने के लिए प्रयास करने हैं।

ईश्वर का सत्य स्वरुप वेद, वैदिक साहित्य व महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों में वर्णित है। इसे पढ़कर ईश्वर के यथार्थ स्वरूप और उसके गुण-कर्म-स्वभाव को विस्तार से जाना जा सकता है। इससे ईश्वर की जीवों पर दया, कृपा व हित की कामनाओं के प्रति कृतज्ञता का भाव प्रकट करके उसकी स्तुति, प्रार्थना उपासना आदि के द्वारा अपने मानव जीवन को उन्नत बनाने के साथ भावी जन्मों में सुखों की प्राप्ति के लिए धर्म व सुखदायक कर्मों की पूंजी संचित की जा सकती है जो जन्म जन्मान्तरों में हमें मोक्ष प्रदान करा सकती है। आईये ! ईश्वर की दया, कृपा व हितकारी भावना के प्रति अपनी नित्यप्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए वेद एवं वैदिक ग्रन्थों के स्वाध्याय सहित ईश्वर की ऋषियों के विधान के अनुसार स्तुति प्रार्थना व उपासना करने का संकल्प लेकर उसे अपने जीवन में चरितार्थ करें। इसी से हमारा मानव जीवन सफल हो सकता है। नान्यः पन्था विद्यते अयनायः। इति।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**